Mahila college Dalmianagar
Department of History
B.A. II (Hons)

Dr. Anu Kumari
Date :- 20/02/2024

Topic :-

पल्लव वंश की उपलब्धियाँ :-

=> पल्लवों की शासन-व्यवस्था बहुत कुछ गुप्त और मौर्य-सम्राटों की शासन-व्यवस्था के समान थी। उसमें सम्राट राज्य का प्रधान था। वह बड़ी-पदवियाँ धारण करता था और राज्य की सम्पूर्ण शक्तियाँ उसमें केन्द्रित थीं। परन्तु सम्राट निरंकुश न थे बल्कि प्रजा की भलाई करना अपना प्रमुख कर्तव्य मानते थे। सम्राट की सहायता के लिए विभिन्न मंत्री और राज्य के अन्य बड़े पदाधिकारी होते थे। सम्पूर्ण राज्य को राष्ट्रों, कोट्टमों और ग्रामों में बाँटा गया था। पल्लव शासकों ने एक अच्छी शासन-व्यवस्था स्थापित करने में सफलता पायी थी।

पल्लव-शासक हिन्दू धर्म को मानने वाले थे। उन्होंने विभिन्न यज्ञ किये और विष्णु, शिव, ब्रह्मा, लक्ष्मी आदि हिन्दू देवी-देवताओं की मूर्तियों को मन्दिरों में प्रतिष्ठित किया। उन्होंने संस्कृत साहित्य और हिन्दू धर्म को संरक्षण प्रदान करके दक्षिण भारत में आर्य-संस्कृति के प्रसार को पूरा कर दिया। छठी सदी के भारत में आरम्भ हुए धार्मिक आन्दोलन पल्लव

राज्य में विभाजित हुए। काँची का विश्वविद्यालय दक्षिण भारत में आर्य-संस्कृति के प्रसार का केन्द्र-स्थान बना और स्वयं काँची नगर हिन्दुओं के सात तीर्थ-नगरों में एक माना जाने लगा। परन्तु पल्लव-शासक धार्मिक दृष्टि से उदार थे। जैन और बौद्ध धर्म के प्रति उनका व्यवहार सहिष्णु था। उनके समय में जहाँ शैव और वैष्णव साहित्य की अत्यन्त प्रगति हुई और अनेक हिन्दू सन्त हुए वहीं जैन और बौद्ध धर्म भी संरक्षण प्राप्त करते रहे।

पल्लव-शासकों के समय साहित्यिक प्रगति हुई। काँची के विश्वविद्यालय ने इस प्रगति में बहुत सहयोग दिया। प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान दिङ्नाग कुछ वर्षों तक काँची के विश्वविद्यालय में रहा था। पल्लव-शासकों में कुछ स्वयं विद्वान हुए और उन्होंने विद्वानों को आश्रय दिया। सम्राट महेन्द्रवर्मन प्रथम ने मत्तविलास-प्रहसन की रचना की थी। उक्त काव्य में उसने एक कापालिक एवं उसकी पत्नी बौद्ध-भिक्षुणी तथा पाशुपत सम्प्रदाय के एक अनुयायी के माध्यम से तत्कालीन बौद्ध एवं शैव धर्मों में प्रचलित तन्त्रवाद और पंचमकारों के गुण-दोषों का वर्णन किया है। सम्राट सिंहविष्णु ने समकालीन विद्वान भारवि को अपने दरबार में आने के लिए पल्लव शासक नरसिंहवर्मन प्रथम भी साहित्यकारों का संरक्षक था। उसके राज्याश्रय में ही महाकवि दण्डिन ने काव्यादर्श एवं दशकुमारचरितम् नामक सुप्रसिद्ध ग्रंथों की रचना की थी। पल्लव-शासकों के समय में संस्कृत के अतिरिक्त तमिल साहित्य की भी प्रगति हुई।

Scanned with CamScanner

सुदूर दक्षिण में पाषाण - वास्तुकला का आरम्भ पल्लव - शासकों ने किया उनके संरक्षण में अनेक मन्दिर पहाड़ों व चट्टानों को काटकर बनाये गये जिनमें विष्णु, शिव, ब्रह्मा तथा हिन्दू देवी देवताओं की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित की गयीं। पल्लव - वास्तुकला का विकास धीरे - धीरे हुआ। विभिन्न शासकों के समय में जो परिवर्तन समय - समय पर इसमें हुए उनके कारण इनको चार भागों में बाँट दिया गया है। सम्राट महेन्द्रवर्मन प्रथम शैली को महेन्द्र - शैली के नाम से पुकारा गया सन् 600-625 में। 625-674 ई० के मध्य में विकसित हुई द्वितीय शैली को मामल्ल शैली पुकारा गया है। मामल्लपुरम के सुन्दर मंदिरों का निर्माण इस शैली के अंतर्गत हुआ। 8वीं सदी में सम्राट राजसिंह के संरक्षण में पनपी तृतीय शैली को राजसिंह - शैली पुकारा गया। इस शैली के अन्तर्गत काँची और महाबलीपुरम के मन्दिरों का निर्माण हुआ जिनमें काँची के कैलाशनाथ मन्दिरों का स्थान प्रमुख है। चौथी शैली सम्राट अपराजित के नाम से अपराजित - शैली कहलायी। इस समय तक पल्लव - वास्तुकला का विकास पूर्णता प्राप्त कर गया। बाहमट का मन्दिर इस शैली का एक अच्छा नमूना है।

इस प्रकार, शासन, धर्म, साहित्य और कला की दृष्टि से पल्लव - शासकों ने दक्षिण भारत की सभ्यता में महत्वपूर्ण योगदान दिया। सुदूर दक्षिण तक आर्य अथवा हिन्दू सभ्यता को पहुँचाने और विकसित करने में पल्लव - वंश का भाग प्रमुख रहा। दक्षिण - पूर्वी एशिया में भारतीय सभ्यता के प्रसार का कार्य भी पल्लवों के समय में हुआ।